भगवान श्रीकृष्ण का अक्षय अनुग्रह

महाभारत की एक कथा पर आधारित

नीतिपरायण पाण्डव भाई, अपने भ्राता धर्मराज युधिष्ठिर के नेतृत्व में, हस्तिनापुर साम्राज्य के न्यायसंगत उत्तराधिकारी थे। परन्तु उनके ईर्ष्यालु चचेरे भाई दुर्योधन के छल-कपट के कारण उन्हें बारह वर्षों के लिए राज्य से निर्वासित करके वनवास दिया गया।

पाण्डवों के प्रति निष्ठावान अनेक ऋषि भी उनके साथ वन में गए। धर्मराज युधिष्ठिर को यह समझ नहीं आ रहा था कि वे अपने परिवार व ऋषियों का भरण-पोषण करने के अपने दायित्व का निर्वाह कैसे करेंगे। धर्मराज युधिष्ठिर ने सूर्यदेव से वरदान पाने के लिए प्रार्थना की। युधिष्ठिर की प्रार्थना सुनकर, सूर्यदेव उनके सामने प्रकट हुए। उनका कवच स्वर्णिम प्रभा का था और उनके हाथ में एक अद्‌भुत पात्र था, जो स्वयं सूर्य के समान ही चमकदार और तेजोमय था, यह 'अक्षय पात्र' था।

सूर्यदेव ने कहा, "हे ज्येष्ठ पाण्डुपुत्र, यह दिव्य पात्र ग्रहण करो। यह ईश्वर के अक्षय अनुग्रह का प्रतीक है। इस पात्र से तुम्हें और तुम्हारे भाइयों को प्रतिदिन भोजन प्राप्त होता रहेगा। तुम्हारी पत्नी, द्रौपदी सभी ऋषियों को भोजन परोसने की सेवा करे। और सभी के भोजन कर लेने के पश्चात्, अन्त में, द्रौपदी अपना भोजन ग्रहण करे, जैसा कि हमारा रिवाज है। मैं तुम्हें वचन देता हूँ कि इस प्रकार भोजन करने से, तुम्हें कभी भूखा नहीं रहना पड़ेगा।"

सूर्यदेव द्वारा दिए गए उपहार के लिए पाण्डव उनके प्रति कृतज्ञ थे और प्रतिदिन उनके आदेशानुसार अक्षय पात्र से अपना भोजन ग्रहण करने लगे। पाण्डवों व सभी ऋषियों के भोजन ग्रहण कर लेने के पश्चात् द्रौपदी अपना भोजन करती थीं। इसके बाद वह पात्र दूसरे दिन सुबह तक ख़ाली रहता था, और अगली सुबह वह जादुई रूप से दोबारा भोजन से भर जाता था।

जब अक्षय पात्र की बात हस्तिनापुर पहुँची, दुष्ट दुर्योधन अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। उसने पाण्डवों के विरुद्ध एक चाल चली। वह दुर्वासा मुनि से मिलने के लिए जाने लगा, उनसे वरदान प्राप्त करने की आशा से, उनके लिए तथा उनके दस हज़ार शिष्यों के लिए भोजन का प्रबन्ध करने लगा। दुर्वासा मुनि सामर्थ्यशाली मुनि थे, वे अपने क्रोध के लिए विश्वभर में विख्यात थे। थोड़ा-सा अनादर होने पर भी वे श्राप दे देते थे। उनके क्रोध से राजा-महाराजा और यहाँ तक कि देवी-देवता भी डरते थे। लेकिन दुर्योधन की सेवा से सन्तुष्ट होकर उन्होंने कहा, "मैं तुमसे प्रसन्न हूँ। तुम जो माँगोगे, तुम्हें वह प्रदान किया जाएगा।"

अपने शत्रुओं के विनाश की सम्भावना से हर्षित, दुर्योधन इसी क्षण की प्रतीक्षा कर रहा था।

दुर्योधन ने नम्रतापूर्वक प्रणाम कर दुर्वासा मुनि से कहा, "हे महर्षि! हे योगीराज! मेरी इच्छा यह है : आप वन में पाण्डवों को दर्शन देने की कृपा करें। वे मेरे प्रिय मित्र हैं और बड़े पुण्यवान हैं। आपके दर्शन पाकर वे बहुत आनन्दित होंगे। कृपया, द्रौपदी के भोजन कर लेने के पश्चात् आप वहाँ जाएँ जिससे वे अच्छी तरह आपकी सेवा कर सकें।" मुनि सहमत हो गए और अगले ही दिन अपने दस हज़ार शिष्यों के साथ पाण्डवों की कुटिया की ओर निकल पड़े।

अगले दिन शाम को मुनि को आते देख, धर्मराज युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ उनका स्वागत करने के लिए शीघ्रता से आगे बढ़े। इन महान ऋषियों का स्वागत करने की जल्दबाज़ी में युधिष्ठिर यह भूल गए कि द्रौपदी ने अभी-अभी अपना भोजन समाप्त किया है। उन्होंने हाथ जोड़कर दुर्वासा मुनि का स्वागत किया और कहा, "हे मुनिवर! आप कृपया नदी में स्नान कर लें, फिर आपको और आपके शिष्यों को भोजन कराने का सौभाग्य हमें प्राप्त हो।"

द्रौपदी, अतिथियों का स्वागत करने हेतु कुटी से बाहर आईं। जब उन्होंने धर्मराज युधिष्ठिर द्वारा दिए गए निमन्त्रण के बारे में सुना तो वे भय से काँप उठीं। अक्षय पात्र तो ख़ाली हो चुका था! भूखे मुनिवर और उनके शिष्यों को भोजन कराना असम्भव था। अब दुर्वासा मुनि निश्चित ही उनके समस्त परिवार को श्राप दे देंगे।

द्रौपदी दौड़कर अपनी कुटिया में गईं और पूजावेदी के सामने घुटने टेककर बड़ी व्याकुलता से पाण्डवों के गुरु, भगवान श्रीकृष्ण से प्रार्थना करने लगीं।

"हे श्रीकृष्ण,
आपकी शक्ति अपरम्पार है,
आप व्यथितों के शाश्वत देवता हैं,
समस्त विश्व और सृष्टि के पालनहार हैं,
आप परात्पर हैं, सभी के परम आश्रय हैं!

हे देवेश, आपकी शरण में आने से
समस्त आपदाएँ नष्ट हो जाती हैं।
आपने पहले भी अनेक बार मेरी रक्षा की है,
इस संकट से आप ही मेरी रक्षा कीजिए।"

द्रौपदी की प्रार्थना सुनकर भगवान श्रीकृष्ण, तत्काल उनके सामने प्रकट हुए। सत्य और धर्म के मूर्तरूप, वे समस्त दिव्य लोकों के समान ज्योतिर्मय थे। उन्होंने दृढ़ व प्रेमपूर्ण स्वर में कहा, "द्रौपदी, मुझे बहुत भूख लगी है! जल्दी! मुझे कुछ खाना दो!"

द्रौपदी विनय भरे स्वर में कहने लगीं, "किन्तु मेरे प्रभु, यहाँ तो कुछ भी भोजन नहीं बचा है! अक्षय पात्र ख़ाली है, और दुर्वासा मुनि हम पर क्रोध करेंगे! कृपया मेरी सहायता कीजिए!"

सबके हृदय-निवासी, भगवान श्रीकृष्ण ने पुनः उन्हें आदेश दिया, "जल्दी करो, जल्दी करो! मेरे पेट में चूहे कूद रहे हैं! सूर्यदेव का पात्र मेरे पास ले आओ! निश्चित ही उसमें कुछ बचा है!"

द्रौपदी ने मन में सोचा, "भगवान में पूर्ण विश्वास रखना और उनकी आज्ञा का पालन करना मेरा धर्म है। वे तो अदृश्य को भी देखते हैं और असम्भव को सम्भव बना देते हैं। मैं स्वयं को उनकी आज्ञा के प्रति समर्पित करती हूँ।" उसने झुककर प्रणाम किया और अक्षय पात्र लाकर अपने श्रीगुरु को दिया। भगवान श्रीकृष्ण ने पात्र के किनारों पर अपनी उँगली घुमाई। फिर वे द्रौपदी की ओर देखकर मुस्कराए और अपनी उँगली निकाली; उसमें चावल का एक दाना लगा हुआ था। उन्होंने स्वाद लेते हुए उस दाने को बड़े आनन्द से खा लिया। फिर उन्होंने कहा, "विश्वात्मा श्रीहरि इस अर्पण से पूर्ण तृप्त हों।"

भीम, जो कि पाण्डवों में सबसे बलशाली थे, इस दिव्य लीला को देख रहे थे। भगवान श्रीकृष्ण उनकी ओर मुड़े और बोले, "जल्दी जाओ और दुर्वासा मुनि तथा बाकी सभी लोगों को भोजन ग्रहण करने के लिए बुला लाओ!"

इसी बीच, नदी में स्नान कर रहे दुर्वासा मुनि और उनके शिष्यों की भोजन करने की इच्छा अचानक चली गई। एक शिष्य ने पूछा, "हे मुनिश्रेष्ठ, अब हम क्या करेंगे? हमारा पेट तो पूरा भरा हुआ लग रहा है। हम पूरी तरह तृप्त हैं। पाण्डवों के यहाँ भोजन करना तो असम्भव है।" मुनि ने उत्तर दिया, "एक बार निमन्त्रण स्वीकार करने के बाद फिर अस्वीकार करके हम एक गम्भीर ग़लती कर देंगे। युधिष्ठिर और उसके भाई पुण्यवान हैं, किन्तु वे योद्धा भी हैं। इस दुराचरण से वे क्रोधित हो जाएँगे। उनके वापस आने से पहले ही हमें यहाँ से चले जाना चाहिए!"

भगवान श्रीकृष्ण के निर्देशानुसार, भीम नदी पर गए और देखा कि दुर्वासा मुनि और उनके शिष्य पाण्डवों की कुटिया से दूर भागे जा रहे हैं। भीम ने जब यह बात युधिष्ठिर को बताई तो उन्होंने पूछा कि यह सब कैसे सम्भव हुआ। तब भीम ने उन्हें भगवान श्रीकृष्ण की लीला के बारे में बताया। सभी पाण्डव अपने श्रीगुरु, श्रीकृष्ण के दर्शन करने व उन्हें अपनी कृतज्ञता अर्पित करने तत्काल कुटिया की ओर गए।

प्रभु ने मनमोहक मुस्कान के साथ सबका स्वागत किया। द्रौपदी ने बताया कि कैसे भगवान श्रीकृष्ण वहाँ प्रकट हुए और किस प्रकार उन्होंने अक्षय पात्र में बचे हुए चावल के उस एक दाने को आनन्द से ग्रहण किया। कृतज्ञता के आँसुओं से पाण्डवों की आँखें भर आईं और उन्होंने झुककर भगवान श्रीकृष्ण को प्रणाम किया।

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा, "द्रौपदी की करुण प्रार्थना के कारण ही, मैं यहाँ उपस्थित हुआ हूँ। यद्यपि चावल के एक दाने की उसकी भेंट बहुत ही साधारण थी, परन्तु उसकी श्रद्धा और भक्ति ने मुझे प्रसन्न किया। मुझमें उसका विश्वास अटल था। जब कोई व्यक्ति अपने कर्तव्य को प्रेमपूर्वक कर, उसे ईश्वर के प्रति समर्पित करता है तब उसके छोटे-से-छोटे सत्कर्म में भी बहुतों का उत्थान करने की शक्ति होती है।

द्रौपदी ने, तुम पाण्डवों के समान ही अपने धर्म का निर्वाह किया है। सदैव याद रखना कि अक्षय पात्र के समान ही ईश्वर का अनुग्रह भी शाश्वत एवं अक्षय है। और जो पुण्यशाली जन ईश्वर की शरण लेते हैं, उनकी निश्चित ही विजय होती है। यशस्वी भव!"

युधिष्ठिर ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा, "हे प्रभु! आप शान्ति के स्रोत हैं तथा यश-समृद्धि के धाम हैं। आपको हमारा बारम्बार प्रणाम। अपने हृदय में हम सदैव आपका स्मरण करते रहेंगे!"

समस्त प्राणियों का अस्तित्व अनन्त ईश्वर में ही है। निससन्देह, द्रौपदी के उस अर्पण से भगवान श्रीकृष्ण की सन्तुष्टि होने के कारण दस हज़ार व्यक्तियों की भूख मिट गई और आश्चर्यजनक रूप से पाण्डवों की रक्षा हुई।

***

महाभारत

महाभारत, महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित संस्कृत में लिखित एक महाकाव्य है। रामायण के साथ ही महाभारत भी भारत की सर्वाधिक प्रसिद्ध पवित्र साहित्यिक रचनाओं में से एक है। बोधकथाओं व सिखावनियों से समृद्ध, महाभारत में श्रीभगवद्गीता की आध्यात्मिक निधि निहित है।

***

मॉर्गन हूपर द्वारा पुनः कथित

© २०२१ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।